OPEN ACCESS

Int. Jr. of Contemp. Res. in Multi. *PEER-REVIEWED JOURNAL* *Volume 5 Issue 3 [May-June] Year 2026*

Research Article

गुप्त काल में स्वास्थ्य सेवा प्रणाली, अस्पताल और सार्वजनिक स्वास्थ्य: एक अध्ययन

जितेन्द्र कुमार मीना [1*], प्रो. डॉ. संजीव कुमार [2]

[1-2] विभाग, इतिहास विभाग पंडित दीनदयाल उपाध्याय शेखावाटी विश्वविद्यालय, सीकर, राजस्थान, भारत

Corresponding Author: * जितेन्द्र कुमार मीना

DOI: https://doi.org/10.5281/zenodo.20610589

शोध सारांश

गुप्तकाल (चौथी से छठी शताब्दी ईस्वी) भारतीय इतिहास का स्वर्णिम युग माना जाता है, क्योंकि इस काल में राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक समृद्धि, सांस्कृतिक उत्कर्ष तथा ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई। साहित्य, कला, गणित, खगोलशास्त्र और दर्शन के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान तथा स्वास्थ्य सेवा प्रणाली का भी उल्लेखनीय विकास हुआ। गुप्त शासकों के संरक्षण तथा अनुकूल सामाजिक-आर्थिक परिस्थितियों ने आयुर्वेदिक चिकित्सा पद्धति को सुदृढ़ आधार प्रदान किया, जिसके परिणामस्वरूप चिकित्सा ज्ञान का संरक्षण, संवर्धन और संस्थागत विस्तार संभव हो सका।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली मुख्यतः आयुर्वेदिक सिद्धांतों पर आधारित थी, जिसमें स्वास्थ्य को केवल रोगों की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि शरीर, मन और आत्मा के संतुलन की अवस्था माना गया। इस काल में स्वास्थ्य संरक्षण, रोग-निवारण, संतुलित आहार, स्वच्छता, योग, व्यायाम तथा नियमित जीवनचर्या पर विशेष बल दिया गया। चिकित्सा व्यवस्था का उद्देश्य केवल रोगियों का उपचार करना नहीं था, बल्कि समाज के समग्र स्वास्थ्य स्तर को बनाए रखना भी था। इस दृष्टि से गुप्तकालीन चिकित्सा प्रणाली आधुनिक सार्वजनिक स्वास्थ्य अवधारणाओं की प्रारंभिक आधारशिला के रूप में दिखाई देती है।

गुप्तकाल में चिकित्सालयों और धर्मार्थ चिकित्सा संस्थानों की व्यवस्था का भी विकास हुआ। चीनी यात्री फाह्यान के यात्रा-वृत्तांत से ज्ञात होता है कि उस समय अनेक नगरों में निर्धनों, रोगियों, वृद्धों तथा असहाय व्यक्तियों के लिए निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध थीं। इन संस्थानों में रोगियों को औषधियाँ, भोजन तथा आवश्यक देखभाल प्रदान की जाती थी। इससे स्पष्ट होता है कि तत्कालीन समाज में चिकित्सा को सामाजिक उत्तरदायित्व और लोककल्याण के महत्वपूर्ण साधन के रूप में देखा जाता था।

इस काल में औषध विज्ञान (Pharmacology) के क्षेत्र में भी उल्लेखनीय प्रगति हुई। वनस्पति, खनिज तथा पशु-आधारित पदार्थों से औषधियों का निर्माण किया जाता था तथा औषध निर्माण की विधियाँ अधिक व्यवस्थित और परिष्कृत हुईं। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट्ट के ग्रंथों के अध्ययन और प्रचार-प्रसार ने चिकित्सा ज्ञान को नई दिशा प्रदान की। शल्य चिकित्सा, रोग निदान, प्रसूति चिकित्सा, बाल चिकित्सा तथा विष विज्ञान जैसे क्षेत्रों में भी महत्वपूर्ण विकास देखने को मिलता है।

प्रस्तुत शोध-पत्र में गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली, चिकित्सालयों की संरचना, चिकित्सा शिक्षा, औषध विज्ञान तथा सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी अवधारणाओं का ऐतिहासिक, विश्लेषणात्मक एवं व्याख्यात्मक अध्ययन किया गया है। यह शोध गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था की वैज्ञानिकता, मानवीयता तथा सामाजिक उपयोगिता को रेखांकित करते हुए भारतीय चिकित्सा परंपरा के विकास में उसके योगदान का मूल्यांकन करता है। साथ ही यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था न केवल तत्कालीन भारतीय समाज के कल्याण का आधार थी, बल्कि उसने विश्व चिकित्सा इतिहास और सार्वजनिक स्वास्थ्य चिंतन को भी महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित किया।

मुख्य शब्द: गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था, आयुर्वेद, चिकित्सालय, सार्वजनिक स्वास्थ्य, चिकित्सा शिक्षा, औषध विज्ञान, रोग-निवारण, स्वास्थ्य संरक्षण, भारतीय चिकित्सा परंपरा, लोककल्याण।

Manuscript Information

- **ISSN No:** 2583-7397
- **Received:** 10-04-2026
- **Accepted:** 06-06-2026
- **Published:** 09-06-2026
- **IJCRM:**5(3); 2026: 698-705
- **©2026, All Rights Reserved**
- **Plagiarism Checked:** Yes
- **Peer Review Process:** Yes

How to Cite this Article

मीना, जितेन्द्र कुमार, कुमार एस. गुप्त काल में स्वास्थ्य सेवा प्रणाली, अस्पताल और सार्वजनिक स्वास्थ्य: एक अध्ययन.. Int J Contemp Res Multidiscip. 2026;5(3):698-705.

Access this Article Online

www.multiarticlesjournal.com

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

1. प्रस्तावना

मानव सभ्यता के विकास के इतिहास में स्वास्थ्य का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान रहा है। किसी भी समाज की सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा बौद्धिक प्रगति उसके नागरिकों के स्वास्थ्य स्तर पर निर्भर करती है। एक स्वस्थ समाज न केवल उत्पादन और विकास की प्रक्रिया में सक्रिय योगदान देता है, बल्कि सांस्कृतिक मूल्यों, ज्ञान परंपराओं और सामाजिक स्थिरता को भी सुदृढ़ बनाता है। यही कारण है कि प्राचीन काल से ही विभिन्न सभ्यताओं ने स्वास्थ्य और चिकित्सा को मानव जीवन के महत्वपूर्ण अंग के रूप में स्वीकार किया। भारतीय सभ्यता भी इस दृष्टि से अत्यंत समृद्ध रही है, जहाँ स्वास्थ्य को केवल शारीरिक अवस्था न मानकर जीवन के समग्र संतुलन और कल्याण से जोड़कर देखा गया।

प्राचीन भारत में चिकित्सा विज्ञान का विकास वैदिक काल से ही प्रारंभ हो गया था। ऋग्वेद और अथर्ववेद में विभिन्न रोगों, औषधियों तथा उपचार पद्धतियों का उल्लेख मिलता है। कालांतर में यही ज्ञान विकसित होकर आयुर्वेद के रूप में संगठित हुआ। आयुर्वेद भारतीय चिकित्सा परंपरा का आधार है, जिसका प्रमुख उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी को पुनः स्वस्थ बनाना है। आयुर्वेद के अनुसार स्वास्थ्य शरीर, मन, इंद्रियों और आत्मा के संतुलन की अवस्था है। इसलिए भारतीय चिकित्सा परंपरा में रोग-निवारण, स्वास्थ्य संरक्षण, संतुलित जीवनशैली, उचित आहार-विहार तथा मानसिक शांति को विशेष महत्व दिया गया। यह समग्र दृष्टिकोण भारतीय चिकित्सा विज्ञान को विश्व की अन्य प्राचीन चिकित्सा प्रणालियों से विशिष्ट बनाता है।

भारतीय चिकित्सा परंपरा के विकास में विभिन्न ऐतिहासिक कालखंडों का महत्वपूर्ण योगदान रहा है, किंतु गुप्तकाल (चौथी से छठी शताब्दी ईस्वी) का स्थान विशेष रूप से उल्लेखनीय है। गुप्त साम्राज्य को भारतीय इतिहास का स्वर्णिम युग कहा जाता है, क्योंकि इस काल में राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक समृद्धि, सांस्कृतिक उत्कर्ष तथा ज्ञान-विज्ञान के विविध क्षेत्रों में अभूतपूर्व प्रगति हुई। साहित्य, कला, स्थापत्य, गणित, खगोलशास्त्र और दर्शन के साथ-साथ चिकित्सा विज्ञान और स्वास्थ्य सेवा व्यवस्था का भी व्यापक विकास हुआ। गुप्त शासकों ने शिक्षा और विद्या के संरक्षण को प्रोत्साहित किया, जिसके परिणामस्वरूप चिकित्सा विज्ञान के अध्ययन और अनुसंधान को भी नई दिशा मिली।

गुप्तकाल में आयुर्वेदिक चिकित्सा व्यवस्था को अधिक संगठित और संस्थागत स्वरूप प्राप्त हुआ। इस समय चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा अन्य आयुर्वेदिक ग्रंथों का अध्ययन और पुनर्संपादन हुआ, जिससे चिकित्सा ज्ञान का संरक्षण और प्रसार संभव हुआ। चिकित्सा शिक्षा गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से दी जाती थी तथा चिकित्सकों को समाज में अत्यंत सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। वे केवल रोगों के उपचारकर्ता ही नहीं, बल्कि समाज के स्वास्थ्य मार्गदर्शक भी माने जाते थे। चिकित्सा व्यवसाय को सेवा और मानव कल्याण का माध्यम समझा जाता था, जिसके कारण चिकित्सकों के प्रति समाज में विशेष आदरभाव विद्यमान था।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह थी कि इसमें स्वास्थ्य संरक्षण और रोग-निवारण को प्राथमिकता दी जाती थी। आयुर्वेदिक सिद्धांतों के अनुसार संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, स्वच्छता, योग, व्यायाम तथा मानसिक संतुलन को स्वस्थ जीवन का आधार माना जाता था। चिकित्सक केवल रोग होने पर उपचार नहीं करते थे, बल्कि लोगों को स्वस्थ जीवन जीने के लिए आवश्यक परामर्श भी प्रदान करते थे। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा (Preventive Medicine) और सार्वजनिक स्वास्थ्य (Public Health) की अवधारणाओं के अत्यंत निकट दिखाई देता है।

गुप्तकाल में चिकित्सा संस्थाओं और चिकित्सालयों की व्यवस्था का भी विकास हुआ। चीनी यात्री फाह्यान के यात्रा-वृत्तांत से ज्ञात होता है कि उस समय अनेक नगरों में धर्मार्थ चिकित्सालय स्थापित थे, जहाँ निर्धन, असहाय, वृद्ध और रोगग्रस्त व्यक्तियों को निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएँ प्रदान की जाती थीं। इन संस्थानों में रोगियों के उपचार के साथ-साथ भोजन, औषधि और देखभाल की भी व्यवस्था की जाती थी। यह तथ्य दर्शाता है कि गुप्तकालीन समाज में चिकित्सा को केवल व्यक्तिगत आवश्यकता नहीं, बल्कि सामाजिक उत्तरदायित्व और लोककल्याण का महत्वपूर्ण साधन माना जाता था। इस प्रकार स्वास्थ्य सेवा प्रणाली समाज के व्यापक हितों से जुड़ी हुई थी।

औषध विज्ञान के क्षेत्र में भी गुप्तकाल उल्लेखनीय उपलब्धियों का साक्षी रहा। विभिन्न औषधीय वनस्पतियों, खनिजों और पशु-आधारित पदार्थों का उपयोग चिकित्सा में किया जाता था। औषधियों के निर्माण, संग्रह, संरक्षण तथा उपयोग की विधियाँ अधिक व्यवस्थित और वैज्ञानिक होती जा रही थीं। जड़ी-बूटियों पर आधारित उपचार प्रणाली के साथ-साथ शल्य चिकित्सा, नेत्र चिकित्सा, अस्थि चिकित्सा और प्रसूति चिकित्सा जैसी शाखाओं का भी विकास हुआ। इससे स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था बहुआयामी और उन्नत स्वरूप धारण कर चुकी थी।

सार्वजनिक स्वास्थ्य की दृष्टि से भी गुप्तकाल अत्यंत महत्वपूर्ण था। नगरों की स्वच्छता, जल स्रोतों की सुरक्षा, स्वच्छ पेयजल की उपलब्धता, संतुलित आहार तथा व्यक्तिगत स्वच्छता पर विशेष ध्यान दिया जाता था। धार्मिक और सामाजिक मान्यताओं के माध्यम से भी स्वच्छता और स्वास्थ्य संबंधी आदतों को प्रोत्साहित किया जाता था। इससे समाज में रोगों की रोकथाम तथा स्वास्थ्य संरक्षण की भावना विकसित हुई। यह व्यवस्था इस बात का प्रमाण है कि गुप्तकालीन समाज स्वास्थ्य के सामाजिक और सामुदायिक आयामों को भी समझता था।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली की एक विशेष उपलब्धि उसका अपेक्षाकृत समावेशी स्वरूप था। यद्यपि सामाजिक संरचना में विभिन्न वर्ग विद्यमान थे, फिर भी चिकित्सा सुविधाओं को केवल अभिजात वर्ग तक सीमित नहीं रखा गया। निर्धनों, असहायों और रोगग्रस्त व्यक्तियों को चिकित्सा सहायता प्रदान करने की व्यवस्था यह दर्शाती है कि स्वास्थ्य को सामाजिक कल्याण और मानवीय सेवा का महत्वपूर्ण माध्यम माना जाता था। इस दृष्टि से गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था कल्याणकारी राज्य की प्रारंभिक अवधारणा का संकेत भी देती है।

2. गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली की अवधारणा

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली का आधार आयुर्वेद था। आयुर्वेद का उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं था, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी को पुनः स्वस्थ बनाना भी था। आयुर्वेद के अनुसार स्वास्थ्य संरक्षण के लिए उचित आहार, संतुलित दिनचर्या, स्वच्छता, व्यायाम तथा मानसिक संतुलन आवश्यक हैं।

गुप्तकाल में स्वास्थ्य सेवा प्रणाली निम्नलिखित सिद्धांतों पर आधारित थी

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली आयुर्वेद के सिद्धांतों पर आधारित एक समग्र (Holistic) स्वास्थ्य व्यवस्था थी। इसका उद्देश्य केवल रोगों

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

का उपचार करना नहीं था, बल्कि व्यक्ति के शारीरिक, मानसिक और सामाजिक स्वास्थ्य की रक्षा करना भी था। इस व्यवस्था के अंतर्गत स्वास्थ्य संरक्षण, रोग-निवारण, रोग निदान, औषधीय उपचार, शल्य चिकित्सा तथा पुनर्वास जैसी विभिन्न प्रक्रियाओं को समान महत्व दिया जाता था। इन सभी तत्वों के समन्वय से एक ऐसी स्वास्थ्य प्रणाली का विकास हुआ जो मानव जीवन के संपूर्ण कल्याण को केंद्र में रखती थी।

1. स्वास्थ्य संरक्षण (Preventive Healthcare)

गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था में स्वास्थ्य संरक्षण को अत्यंत महत्वपूर्ण माना गया। आयुर्वेद के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना चिकित्सा का प्रथम उद्देश्य है। इसलिए लोगों को संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, योग, व्यायाम तथा स्वच्छता का पालन करने की सलाह दी जाती थी। चिकित्सकों का मानना था कि उचित जीवनशैली अपनाकर अनेक रोगों से बचा जा सकता है। इस प्रकार स्वास्थ्य संरक्षण की अवधारणा गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का मूल आधार थी।

2. रोग-निवारण (Disease Prevention)

गुप्तकाल में रोग उत्पन्न होने के बाद उपचार करने की अपेक्षा रोगों को रोकने पर अधिक बल दिया जाता था। आयुर्वेदिक ग्रंथों में रोगों के कारणों की पहचान कर उनसे बचाव के उपाय बताए गए हैं। दूषित भोजन, अस्वच्छता, अनियमित दिनचर्या तथा मानसिक तनाव को रोगों के प्रमुख कारण माना जाता था। इसलिए स्वच्छ वातावरण, संतुलित भोजन, शुद्ध जल, नियमित व्यायाम और मानसिक संतुलन को रोग-निवारण के महत्वपूर्ण साधन समझा जाता था। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा (Preventive Medicine) के सिद्धांतों से काफी मेल खाता है।

3. रोग निदान (Diagnosis)

गुप्तकालीन चिकित्सक रोग के उपचार से पूर्व उसके सही निदान पर विशेष ध्यान देते थे। आयुर्वेद के अनुसार रोग की प्रकृति, कारण और अवस्था को समझे बिना प्रभावी उपचार संभव नहीं है। रोग निदान के लिए नाड़ी परीक्षण, मूत्र परीक्षण, मल परीक्षण, नेत्र निरीक्षण, जिह्वा परीक्षण तथा रोगी की शारीरिक और मानसिक स्थिति का अवलोकन किया जाता था। चिकित्सक रोगी की प्रकृति, आयु, आहार और जीवनशैली का भी अध्ययन करते थे। इससे रोग के वास्तविक कारणों की पहचान संभव हो पाती थी।

4. औषधीय उपचार (Medication)

गुप्तकाल में औषधीय उपचार चिकित्सा व्यवस्था का प्रमुख अंग था। विभिन्न वनस्पतियों, खनिजों और पशु-आधारित पदार्थों से औषधियाँ तैयार की जाती थीं। तुलसी, आंवला, हरितकी, नीम, अश्वगंधा और गिलोय जैसी औषधीय वनस्पतियों का व्यापक उपयोग किया जाता था। औषधियों को चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, घृत, तैल और लेप के रूप में तैयार किया जाता था। चिकित्सक रोगी की प्रकृति तथा रोग की अवस्था के अनुसार औषधियों का चयन करते थे, जिससे उपचार अधिक प्रभावी हो सके।

5. शल्य चिकित्सा (Surgical Treatment)

गुप्तकालीन चिकित्सा विज्ञान में शल्य चिकित्सा का भी महत्वपूर्ण स्थान था। सुश्रुत परंपरा के आधार पर विभिन्न प्रकार की शल्य क्रियाएँ की जाती थीं। अस्थिभंग (Fracture), घावों का उपचार, मोतियाबिंद की शल्यक्रिया तथा नाक पुनर्निर्माण (Rhinoplasty) जैसी जटिल प्रक्रियाओं का ज्ञान उस समय उपलब्ध था। शल्य चिकित्सा के लिए विशेष उपकरणों का उपयोग किया जाता था तथा चिकित्सकों को व्यावहारिक प्रशिक्षण भी दिया जाता था। इससे स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था केवल औषधीय उपचार तक सीमित नहीं थी, बल्कि शल्य चिकित्सा के क्षेत्र में भी उन्नत थी।

6. पुनर्वास एवं स्वास्थ्य संवर्धन (Rehabilitation and Health Promotion)

गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था में रोगी के उपचार के बाद उसके पुनर्वास और स्वास्थ्य संवर्धन पर भी ध्यान दिया जाता था। रोगमुक्त होने के पश्चात रोगी को उचित आहार, विश्राम, व्यायाम तथा स्वास्थ्यवर्धक जीवनशैली अपनाने की सलाह दी जाती थी ताकि वह पूर्ण रूप से स्वस्थ हो सके। रसायन चिकित्सा (Rejuvenation Therapy) और स्वास्थ्यवर्धक उपायों के माध्यम से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने का प्रयास किया जाता था। इसका उद्देश्य केवल रोग को समाप्त करना नहीं, बल्कि व्यक्ति के संपूर्ण स्वास्थ्य और जीवन-गुणवत्ता में सुधार करना था।

7. आयुर्वेद

भारतीय चिकित्सा परंपरा की सबसे प्राचीन, समृद्ध और वैज्ञानिक चिकित्सा प्रणाली आयुर्वेद है। "आयुर्वेद" शब्द संस्कृत के दो शब्दों 'आयुः' (जीवन) और 'वेद' (ज्ञान) से मिलकर बना है, जिसका शाब्दिक अर्थ है **"जीवन का विज्ञान"**। आयुर्वेद केवल रोगों के उपचार की पद्धति नहीं है, बल्कि यह स्वस्थ, संतुलित और दीर्घायु जीवन जीने की एक समग्र जीवन-दृष्टि प्रस्तुत करता है। भारतीय चिकित्सा विज्ञान का मूल आधार होने के कारण आयुर्वेद ने प्राचीन भारत की स्वास्थ्य व्यवस्था को गहराई से प्रभावित किया। गुप्तकाल में आयुर्वेद का विकास अपने चरम पर पहुँचा और यह चिकित्सा तथा स्वास्थ्य सेवा प्रणाली का प्रमुख आधार बन गया।

गुप्त काल में साहित्य, दर्शन, विज्ञान तथा चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय प्रगति हुई। आयुर्वेद को राजकीय संरक्षण प्राप्त हुआ तथा इसके अध्ययन, शिक्षण और व्यावहारिक उपयोग का व्यापक विस्तार हुआ। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट्ट के ग्रंथों का अध्ययन चिकित्सा शिक्षा का प्रमुख आधार था। इन ग्रंथों के माध्यम से आयुर्वेदिक सिद्धांतों का संरक्षण और प्रसार हुआ तथा चिकित्सा विज्ञान को अधिक व्यवस्थित स्वरूप प्राप्त हुआ।

आयुर्वेद का मूल उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी को पुनः स्वस्थ बनाना है। **आयुर्वेद का प्रसिद्ध सूत्र है –**

"स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्य विकार प्रशमनम्।"

अर्थात् स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और रोगी के रोगों का निवारण करना ही आयुर्वेद का प्रमुख उद्देश्य है। यही सिद्धांत गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का भी आधार था।

आयुर्वेद की दार्शनिक पृष्ठभूमि भारतीय दर्शन की मूल अवधारणाओं पर आधारित है। इसके अनुसार मानव शरीर पंचमहाभूतों पृथ्वी, जल, अग्नि, वायु और आकाश से निर्मित है। इन तत्वों के संतुलन से स्वास्थ्य और असंतुलन से रोग उत्पन्न होते हैं। गुप्तकालीन चिकित्सक रोगों के निदान और उपचार में इन सिद्धांतों का व्यापक उपयोग करते थे।

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

आयुर्वेद का सबसे महत्वपूर्ण सिद्धांत **त्रिदोष सिद्धांत** है। इसके अनुसार शरीर में तीन प्रमुख दोष होते हैं –

1. **वात** – शरीर की गति और संचार क्रियाओं का नियंत्रक।
2. **पित्त** – पाचन, चयापचय और ऊष्मा का नियंत्रक।
3. **कफ** – शरीर की स्थिरता, स्निग्धता और संरचना का नियंत्रक।

इन तीनों दोषों का संतुलन स्वास्थ्य का प्रतीक माना जाता है, जबकि असंतुलन रोगों का कारण बनता है। गुप्तकालीन चिकित्सक रोगों के कारणों को समझने और उपचार निर्धारित करने के लिए त्रिदोष सिद्धांत का उपयोग करते थे।

आयुर्वेद में शरीर की संरचना और कार्यप्रणाली को समझाने के लिए **सप्तधातु**, **त्रिमल** तथा **अग्नि** की अवधारणाएँ भी महत्वपूर्ण हैं। सप्तधातुओं रस, रक्त, मांस, मेद, अस्थि, मज्जा और शुक्र को शरीर की आधारभूत संरचनाएँ माना गया है। इनके संतुलित रहने पर शरीर स्वस्थ रहता है। इसी प्रकार अग्नि (पाचन शक्ति) को स्वास्थ्य का आधार माना गया है। गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था में इन सिद्धांतों के आधार पर रोगों का निदान और उपचार किया जाता था।

गुप्तकाल में आयुर्वेदिक चिकित्सा का एक महत्वपूर्ण पक्ष **रोग-निवारण और स्वास्थ्य संरक्षण** था। चिकित्सकों का मानना था कि संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, योग, व्यायाम और स्वच्छता के माध्यम से अनेक रोगों को रोका जा सकता है। इसलिए लोगों को स्वास्थ्य संबंधी नियमों का पालन करने की सलाह दी जाती थी। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा के सिद्धांतों से काफी मेल खाता है।

रोग निदान की दृष्टि से आयुर्वेद अत्यंत विकसित था। गुप्तकालीन चिकित्सक रोगी की नाड़ी, मूत्र, मल, नेत्र, जिह्वा तथा शारीरिक और मानसिक स्थिति का परीक्षण करते थे। रोगी की प्रकृति, आयु, भोजन की आदतों और जीवनशैली का भी अध्ययन किया जाता था। इसके आधार पर रोग के कारणों और प्रकृति का निर्धारण किया जाता था। यह व्यक्तिगत चिकित्सा की अवधारणा का प्रारंभिक रूप माना जा सकता है।

औषध विज्ञान आयुर्वेद का एक महत्वपूर्ण अंग था। गुप्तकाल में वनस्पतियों, खनिजों और पशु-आधारित पदार्थों से औषधियाँ तैयार की जाती थीं। हरितकी, आंवला, गिलोय, तुलसी, नीम, अश्वगंधा और ब्राह्मी जैसी औषधीय वनस्पतियों का व्यापक उपयोग होता था। औषधियों को चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, घृत, तैल तथा लेप के रूप में तैयार किया जाता था। इससे चिकित्सा व्यवस्था अधिक प्रभावी और व्यवस्थित बनती थी।

3. गुप्तकाल में चिकित्सकों की भूमिका

गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था में चिकित्सालयों का महत्वपूर्ण स्थान था। यद्यपि आधुनिक अर्थों में संगठित अस्पताल प्रणाली विकसित नहीं हुई थी, फिर भी नगरों और प्रमुख धार्मिक केंद्रों में रोगियों के उपचार हेतु चिकित्सालयों एवं धर्मार्थ चिकित्सा संस्थानों की व्यवस्था विद्यमान थी। चीनी यात्री फाह्यान ने अपने यात्रा-वृत्तांत में उल्लेख किया है कि भारत में निर्धनों, असहायों और रोगियों के लिए निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध थीं। इन संस्थानों में रोगियों को औषधियाँ, भोजन तथा आवश्यक देखभाल प्रदान की जाती थी। चिकित्सालय केवल उपचार के केंद्र नहीं थे, बल्कि मानव सेवा और सामाजिक कल्याण के महत्वपूर्ण संस्थान भी थे। इनकी स्थापना से यह स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन समाज स्वास्थ्य को लोकहित और सामाजिक उत्तरदायित्व से जोड़कर देखता था।

एक चिकित्सक में निम्न गुण अपेक्षित माने जाते थे –

- चिकित्सा शास्त्र का गहन ज्ञान
- व्यावहारिक अनुभव
- नैतिकता और करुणा
- रोगी के प्रति समर्पण
- औषध विज्ञान का ज्ञान

चिकित्सकों को समाज में विद्वान वर्ग का सदस्य माना जाता था तथा राजकीय संरक्षण भी प्राप्त था।

4. सार्वजनिक स्वास्थ्य

गुप्तकाल में सार्वजनिक स्वास्थ्य की अवधारणा को विशेष महत्व दिया गया। आयुर्वेद के अनुसार स्वस्थ समाज ही समृद्ध राष्ट्र का आधार होता है। इसलिए स्वच्छता, शुद्ध पेयजल, संतुलित आहार, पर्यावरणीय स्वच्छता तथा व्यक्तिगत स्वास्थ्य संबंधी नियमों पर बल दिया जाता था। नगरों में जलाशयों, कुओं और तालाबों की देखभाल की जाती थी ताकि लोगों को स्वच्छ जल उपलब्ध हो सके। धार्मिक और सामाजिक परंपराओं के माध्यम से भी स्वच्छता तथा स्वास्थ्य संबंधी आदतों को प्रोत्साहित किया जाता था। सार्वजनिक स्वास्थ्य संबंधी यह दृष्टिकोण आधुनिक जनस्वास्थ्य व्यवस्था की प्रारंभिक अवधारणाओं से मेल खाता है।

5. चिकित्सा शिक्षा और प्रशिक्षण

गुप्तकाल में चिकित्सा शिक्षा का उल्लेखनीय विकास हुआ। शिक्षा मुख्यतः गुरु-शिष्य परंपरा के माध्यम से प्रदान की जाती थी, जिसमें विद्यार्थियों को चिकित्सा विज्ञान का सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों प्रकार का प्रशिक्षण दिया जाता था। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा अन्य आयुर्वेदिक ग्रंथ चिकित्सा शिक्षा के प्रमुख आधार थे। विद्यार्थियों को शरीर रचना विज्ञान, रोग विज्ञान, औषध विज्ञान, शल्य चिकित्सा तथा रोग निदान संबंधी ज्ञान प्रदान किया जाता था। शल्य चिकित्सा के विद्यार्थियों को व्यावहारिक अभ्यास भी कराया जाता था। इस प्रकार चिकित्सा शिक्षा ने प्रशिक्षित चिकित्सकों की एक सुदृढ़ परंपरा विकसित की, जिसने स्वास्थ्य सेवा प्रणाली को मजबूत आधार प्रदान किया।

चिकित्सा शिक्षा के प्रमुख विषय थे –

- शरीर रचना विज्ञान
- शरीर क्रिया विज्ञान
- रोग विज्ञान
- औषध विज्ञान
- शल्य चिकित्सा
- विष विज्ञान
- प्रसूति एवं बाल चिकित्सा

6. औषध विज्ञान और चिकित्सा व्यवस्था

गुप्तकाल औषध विज्ञान के विकास का महत्वपूर्ण काल था। आयुर्वेदिक चिकित्सक विभिन्न वनस्पतियों, खनिजों तथा पशु-आधारित पदार्थों का उपयोग औषधियों के निर्माण में करते थे। तुलसी, हरितकी, आंवला, गिलोय, अश्वगंधा, ब्राह्मी तथा नीम जैसी औषधीय वनस्पतियाँ व्यापक रूप से प्रयुक्त होती थीं। इसके अतिरिक्त स्वर्ण, रजत, ताम्र और लौह जैसे खनिज पदार्थों का भी चिकित्सा में उपयोग किया जाता था। औषधियों को चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, घृत, तैल तथा लेप के रूप में

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

तैयार किया जाता था। औषध निर्माण और संरक्षण की विकसित विधियाँ गुप्तकालीन चिकित्सा विज्ञान की उन्नत अवस्था को प्रदर्शित करती हैं।

वनस्पति आधारित औषधियाँ – तुलसी, हरितकी, आंवला, नीम, गिलोय, अश्वगंधा, ब्राह्मी

खनिज आधारित औषधियाँ – स्वर्ण, रजत, ताम्र, लौह

पशु आधारित औषधियाँ – घृत, दुग्ध, मधु

औषधियों को चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, घृत, तैल और लेप के रूप में तैयार किया जाता था। औषध निर्माण की यह विकसित प्रणाली स्वास्थ्य सेवा को अधिक प्रभावी बनाती थी।

7. रोग-निवारण और स्वास्थ्य संरक्षण

गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण विशेषता रोगों के उपचार से अधिक उनके निवारण पर बल देना था। आयुर्वेद के अनुसार रोग उत्पन्न होने के कारणों को समझकर उनसे बचाव करना स्वास्थ्य संरक्षण का सर्वोत्तम उपाय है। इसलिए संतुलित भोजन, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, योग, व्यायाम, स्वच्छता तथा मानसिक संतुलन को रोग-निवारण के प्रमुख साधन माना जाता था। चिकित्सक लोगों को रोगों से बचने के लिए उचित जीवनशैली अपनाने की सलाह देते थे। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा की अवधारणा के अत्यंत निकट है।

स्वास्थ्य संरक्षण के प्रमुख उपाय थे –

- नियमित दिनचर्या
- ऋतुचर्या का पालन
- संतुलित भोजन
- व्यक्तिगत स्वच्छता
- योग और व्यायाम
- मानसिक संतुलन
- पर्याप्त विश्राम

8. स्वास्थ्य संरक्षण

गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली में **स्वास्थ्य संरक्षण** को अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त था। आयुर्वेदिक चिकित्सा दर्शन का मूल उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं था, बल्कि स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना और उसे दीर्घकाल तक स्वस्थ बनाए रखना भी था। आयुर्वेद का प्रसिद्ध सिद्धांत - **"स्वस्थस्य स्वास्थ्य रक्षणम्, आतुरस्य विकार प्रशमनम्"** - गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था की मूल भावना को अभिव्यक्त करता है। इसका अर्थ है कि चिकित्सा विज्ञान का प्रथम कर्तव्य स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य का संरक्षण करना तथा द्वितीय कर्तव्य रोगी के रोगों का निवारण करना है। इसी कारण गुप्तकालीन चिकित्सक रोग उत्पन्न होने के बाद उपचार करने की अपेक्षा रोगों की रोकथाम और स्वास्थ्य संवर्धन पर अधिक बल देते थे।

गुप्तकाल में यह मान्यता प्रचलित थी कि स्वास्थ्य मानव जीवन की सबसे बड़ी संपत्ति है तथा व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक विकास का आधार भी है। इसलिए स्वास्थ्य संरक्षण को केवल व्यक्तिगत आवश्यकता न मानकर सामाजिक कल्याण और राष्ट्र की समृद्धि से भी जोड़ा गया। एक स्वस्थ व्यक्ति अपने परिवार, समाज और राज्य के प्रति अधिक प्रभावी योगदान दे सकता है। इसी कारण स्वास्थ्य संबंधी नियमों और आदर्शों को सामाजिक जीवन का महत्वपूर्ण अंग बनाया गया।

आयुर्वेद के अनुसार स्वास्थ्य संरक्षण का सबसे महत्वपूर्ण आधार **संतुलित आहार (Balanced Diet)** था। गुप्तकालीन चिकित्सकों का विश्वास था कि उचित भोजन ही स्वास्थ्य का मूल आधार है। चरक संहिता में आहार को जीवन, शक्ति, उत्साह और स्वास्थ्य का प्रमुख स्रोत बताया गया है। लोगों को उनकी प्रकृति, आयु, ऋतु तथा शारीरिक आवश्यकताओं के अनुसार भोजन करने की सलाह दी जाती थी। पौष्टिक, ताजा और सुपाच्य भोजन को स्वास्थ्यवर्धक माना जाता था, जबकि अत्यधिक भोजन, बासी भोजन तथा असंतुलित आहार को रोगों का कारण समझा जाता था। इस प्रकार आहार को केवल भोजन नहीं, बल्कि औषधि के समान महत्व दिया जाता था।

स्वास्थ्य संरक्षण में **विहार (Lifestyle Practices)** का भी विशेष महत्व था। आयुर्वेद में शरीर और मन की संतुलित अवस्था बनाए रखने के लिए नियमित जीवनशैली अपनाने पर बल दिया गया है। गुप्तकालीन समाज में लोगों को समय पर भोजन करने, पर्याप्त विश्राम लेने, शारीरिक श्रम करने तथा मानसिक संयम बनाए रखने की शिक्षा दी जाती थी। यह माना जाता था कि अनियमित जीवनशैली शरीर के प्राकृतिक संतुलन को बिगाड़ देती है और अनेक रोगों को जन्म देती है।

दिनचर्या (Daily Regimen) स्वास्थ्य संरक्षण का एक अन्य महत्वपूर्ण तत्व थी। आयुर्वेद में प्रतिदिन की गतिविधियों के लिए निश्चित नियम निर्धारित किए गए थे। प्रातःकाल शीघ्र उठना, शौच एवं स्नान करना, व्यायाम करना, स्वच्छ वस्त्र धारण करना तथा नियमित समय पर भोजन करना स्वस्थ जीवन के आवश्यक अंग माने जाते थे। इन नियमों का उद्देश्य शरीर की प्राकृतिक क्रियाओं को संतुलित बनाए रखना और रोगों से बचाव करना था। गुप्तकालीन समाज में दिनचर्या का पालन स्वास्थ्य संरक्षण के महत्वपूर्ण साधन के रूप में स्वीकार किया गया था।

इसी प्रकार **ऋतुचर्या (Seasonal Regimen)** को भी स्वास्थ्य संरक्षण का महत्वपूर्ण आधार माना गया। आयुर्वेद के अनुसार विभिन्न ऋतुओं का प्रभाव शरीर पर पड़ता है, इसलिए प्रत्येक ऋतु के अनुसार आहार-विहार में परिवर्तन आवश्यक है। ग्रीष्म, वर्षा, शरद, हेमंत, शिशिर और वसंत ऋतु के लिए अलग-अलग स्वास्थ्य संबंधी निर्देश दिए गए थे। ऋतु के अनुकूल भोजन, वस्त्र और दैनिक गतिविधियाँ अपनाने से शरीर की प्रतिरोधक क्षमता बनी रहती थी और मौसमी रोगों से बचाव संभव होता था। यह अवधारणा गुप्तकालीन चिकित्सा विज्ञान की वैज्ञानिक और पर्यावरण-संबद्ध दृष्टि को दर्शाती है।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य संरक्षण में **योग और व्यायाम** का भी विशेष स्थान था। योग को शरीर, मन और आत्मा के संतुलन का साधन माना जाता था। नियमित योगाभ्यास से शारीरिक शक्ति, मानसिक एकाग्रता तथा आत्मिक शांति प्राप्त होती है। इसके साथ-साथ विभिन्न प्रकार के व्यायामों को भी स्वास्थ्य संवर्धन का माध्यम माना जाता था। व्यायाम शरीर को सुदृढ़ बनाता है, पाचन शक्ति को बढ़ाता है तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता में वृद्धि करता है। इसलिए स्वस्थ जीवन के लिए योग और व्यायाम को दैनिक जीवन का अनिवार्य भाग माना गया।

मानसिक स्वास्थ्य को भी स्वास्थ्य संरक्षण का अभिन्न अंग माना जाता था। आयुर्वेद के अनुसार मन और शरीर का गहरा संबंध है तथा मानसिक अशांति अनेक शारीरिक रोगों का कारण बन सकती है। इसलिए क्रोध, चिंता, भय, ईर्ष्या और तनाव जैसी नकारात्मक भावनाओं से बचने तथा संयम, संतोष, धैर्य और सकारात्मक सोच अपनाने पर बल दिया जाता था। ध्यान, आध्यात्मिक चिंतन और धार्मिक गतिविधियाँ मानसिक शांति प्राप्त करने के प्रभावी साधन मानी

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

जाती थीं। इस प्रकार गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था में मानसिक स्वास्थ्य को शारीरिक स्वास्थ्य के समान महत्व प्राप्त था।

स्वच्छता भी स्वास्थ्य संरक्षण का महत्वपूर्ण आधार थी। व्यक्तिगत स्वच्छता तथा पर्यावरणीय स्वच्छता दोनों पर विशेष ध्यान दिया जाता था। नियमित स्नान, स्वच्छ वस्त्र, शुद्ध भोजन तथा स्वच्छ जल का उपयोग स्वास्थ्य बनाए रखने के लिए आवश्यक माना जाता था। नगरों और ग्रामों में जल स्रोतों की देखभाल तथा स्वच्छता संबंधी नियमों का पालन भी सार्वजनिक स्वास्थ्य संरक्षण का महत्वपूर्ण अंग था। यह व्यवस्था संक्रामक रोगों की रोकथाम में सहायक सिद्ध होती थी।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य संरक्षण की एक महत्वपूर्ण विशेषता इसका **समग्र (Holistic) दृष्टिकोण** था। इसमें शरीर, मन और आत्मा को एक-दूसरे से जुड़ा हुआ माना गया। स्वास्थ्य केवल शारीरिक बल का नाम नहीं था, बल्कि मानसिक संतुलन, नैतिक आचरण, सामाजिक सामंजस्य और आध्यात्मिक उन्नति को भी स्वास्थ्य का आवश्यक घटक समझा जाता था। यही कारण है कि गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था में स्वास्थ्य संरक्षण का अर्थ केवल रोगों से बचाव नहीं, बल्कि जीवन की समग्र गुणवत्ता में सुधार करना था।

9. भारतीय चिकित्सा परंपरा

भारतीय चिकित्सा परंपरा विश्व की सर्वाधिक प्राचीन, समृद्ध और वैज्ञानिक चिकित्सा परंपराओं में से एक है। इसका इतिहास वैदिक काल से प्रारंभ होकर विभिन्न ऐतिहासिक चरणों से गुजरते हुए निरंतर विकसित होता रहा है। भारतीय चिकित्सा ज्ञान का मूल आधार आयुर्वेद है, जिसे अथर्ववेद का उपवेद माना जाता है। आयुर्वेद केवल रोगों के उपचार की पद्धति नहीं है, बल्कि यह जीवन को स्वस्थ, संतुलित और दीर्घायु बनाने का एक व्यापक विज्ञान है। भारतीय चिकित्सा परंपरा की सबसे महत्वपूर्ण विशेषता इसका समग्र (Holistic) दृष्टिकोण है, जिसमें शरीर, मन, इंद्रियों और आत्मा को एक-दूसरे से जुड़ा हुआ माना गया है। इस दृष्टिकोण के अनुसार स्वास्थ्य केवल शारीरिक रोगों की अनुपस्थिति नहीं, बल्कि मानसिक, सामाजिक और आध्यात्मिक संतुलन की अवस्था है।

प्राचीन भारत में चिकित्सा ज्ञान का विकास ऋषियों और आचार्यों द्वारा किया गया। वैदिक साहित्य में रोगों, औषधियों और उपचार विधियों का उल्लेख मिलता है। कालांतर में यह ज्ञान चरक, सुश्रुत और अन्य आयुर्वेदाचार्यों के प्रयासों से व्यवस्थित रूप से संकलित और विकसित हुआ। भारतीय चिकित्सा परंपरा में रोगों के कारणों, उनके निदान, उपचार तथा स्वास्थ्य संरक्षण के उपायों का विस्तृत वर्णन मिलता है। विशेष रूप से त्रिदोष सिद्धांत वात, पित्त और कफ भारतीय चिकित्सा दर्शन का आधार माना जाता है। स्वास्थ्य को इन दोषों के संतुलन तथा रोग को इनके असंतुलन का परिणाम माना गया।

गुप्तकाल भारतीय चिकित्सा परंपरा के विकास का एक महत्वपूर्ण चरण था। इस काल में राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक समृद्धि और सांस्कृतिक उन्नति ने चिकित्सा विज्ञान के विकास को अनुकूल वातावरण प्रदान किया। आयुर्वेदिक ज्ञान का संरक्षण और प्रसार हुआ तथा चिकित्सा शिक्षा को संगठित स्वरूप प्राप्त हुआ। चिकित्सा ग्रंथों का अध्ययन व्यापक रूप से किया जाने लगा और चिकित्सकों को समाज में सम्मानजनक स्थान प्राप्त हुआ। इस काल में चिकित्सा विज्ञान केवल सैद्धांतिक विषय नहीं रहा, बल्कि व्यावहारिक जीवन का अभिन्न अंग बन गया।

गुप्तकाल में **चरक संहिता** और **सुश्रुत संहिता** जैसी महत्वपूर्ण चिकित्सा कृतियों का व्यापक प्रभाव दिखाई देता है। चरक संहिता ने आंतरिक चिकित्सा (कायचिकित्सा), रोग निदान, औषध विज्ञान तथा स्वास्थ्य संरक्षण के सिद्धांतों को व्यवस्थित रूप प्रदान किया। वहीं सुश्रुत संहिता ने शल्य चिकित्सा, अस्थि चिकित्सा, नेत्र चिकित्सा और प्रसूति विज्ञान के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। इन ग्रंथों ने चिकित्सा ज्ञान को वैज्ञानिक आधार प्रदान किया तथा चिकित्सा शिक्षा के प्रमुख स्रोत के रूप में कार्य किया।

गुप्तकाल के उत्तरार्ध में वाग्भट्ट द्वारा रचित **अष्टांग संग्रह** और **अष्टांग हृदयम्** ने भारतीय चिकित्सा परंपरा को और अधिक समृद्ध बनाया। वाग्भट्ट ने पूर्ववर्ती चिकित्सा ज्ञान को सरल, व्यवस्थित और व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत किया। उनके ग्रंथों में आयुर्वेद के आठ अंगों कायचिकित्सा, शल्य तंत्र, शालाक्य तंत्र, कौमारभृत्य, अगद तंत्र, भूत विद्या, रसायन तथा वाजीकरण का विस्तृत विवेचन मिलता है। इससे चिकित्सा विज्ञान की विभिन्न शाखाओं का व्यवस्थित विकास संभव हुआ।

भारतीय चिकित्सा परंपरा की एक अन्य महत्वपूर्ण विशेषता रोगों के उपचार के साथ-साथ स्वास्थ्य संरक्षण और रोग-निवारण पर बल देना है। गुप्तकालीन चिकित्सक संतुलित आहार, नियमित दिनचर्या, ऋतुचर्या, योग, व्यायाम तथा मानसिक शांति को स्वस्थ जीवन का आधार मानते थे। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा और सार्वजनिक स्वास्थ्य की अवधारणाओं से काफी मेल खाता है। इसके अतिरिक्त औषधीय वनस्पतियों, खनिज पदार्थों और प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग कर औषधियों का निर्माण किया जाता था, जिससे चिकित्सा व्यवस्था अधिक प्रभावी और जनसुलभ बनती थी।

10. लोककल्याण

गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण और विशिष्ट उद्देश्य **लोककल्याण** था। प्राचीन भारतीय चिंतन में राज्य, समाज और धर्म का मूल उद्देश्य जनसाधारण के कल्याण को सुनिश्चित करना माना गया है। इसी परंपरा के अनुरूप गुप्तकाल में स्वास्थ्य सेवाओं को केवल व्यक्तिगत उपचार का साधन नहीं समझा गया, बल्कि उन्हें समाज के व्यापक हित और सामूहिक कल्याण से जोड़कर देखा गया। चिकित्सा व्यवस्था का लक्ष्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं था, बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग को स्वस्थ, सुरक्षित और सक्षम बनाना भी था। इस प्रकार स्वास्थ्य और लोककल्याण एक-दूसरे के पूरक तत्व थे। भारतीय चिकित्सा परंपरा, विशेषकर आयुर्वेद, मानव जीवन को सामाजिक और नैतिक संदर्भों में देखती है। आयुर्वेद का मूल उद्देश्य केवल रोगी को स्वस्थ करना नहीं, बल्कि व्यक्ति और समाज दोनों के स्वास्थ्य की रक्षा करना है। गुप्तकालीन चिकित्सकों का विश्वास था कि स्वस्थ नागरिक ही एक समृद्ध और शक्तिशाली समाज की नींव होते हैं। इसलिए स्वास्थ्य सेवाओं को सामाजिक उत्तरदायित्व तथा जनकल्याण के महत्वपूर्ण साधन के रूप में विकसित किया गया। चिकित्सा विज्ञान को मानव सेवा का माध्यम माना जाता था और चिकित्सकों को समाज में सम्मानित स्थान प्राप्त था।

गुप्तकाल में लोककल्याण की भावना का सबसे महत्वपूर्ण प्रमाण चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता में दिखाई देता है। चीनी यात्री **फाह्यान** ने अपने यात्रा-वृत्तांत में उल्लेख किया है कि भारत के अनेक नगरों में ऐसे धर्मार्थ चिकित्सालय स्थापित थे, जहाँ निर्धनों, रोगियों, वृद्धों तथा असहाय व्यक्तियों को निःशुल्क चिकित्सा सेवाएँ प्रदान की जाती थीं। इन चिकित्सालयों में रोगियों को औषधियाँ, भोजन तथा आवश्यक देखभाल उपलब्ध कराई जाती थी। यह व्यवस्था उस समय की सामाजिक संवेदनशीलता तथा मानवीय दृष्टिकोण को प्रदर्शित

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

करती है। इससे स्पष्ट होता है कि स्वास्थ्य सेवाओं को केवल संपन्न वर्ग तक सीमित नहीं रखा गया था, बल्कि समाज के कमजोर और वंचित वर्गों तक भी पहुँचाने का प्रयास किया गया।

लोककल्याण की अवधारणा का संबंध केवल रोगियों के उपचार से ही नहीं था, बल्कि स्वास्थ्य संरक्षण और रोग-निवारण से भी था। गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था में लोगों को स्वस्थ जीवनशैली अपनाने के लिए प्रेरित किया जाता था। संतुलित आहार, स्वच्छता, योग, व्यायाम, नियमित दिनचर्या तथा मानसिक संतुलन को स्वास्थ्य संरक्षण के आवश्यक साधन माना जाता था। इन उपायों का उद्देश्य केवल व्यक्तिगत स्वास्थ्य को बनाए रखना नहीं था, बल्कि संपूर्ण समाज को रोगों से सुरक्षित रखना भी था। इस प्रकार सार्वजनिक स्वास्थ्य और लोककल्याण के बीच घनिष्ठ संबंध स्थापित किया गया।

गुप्तकालीन समाज में धार्मिक और नैतिक मूल्यों ने भी लोककल्याण की भावना को सुदृढ़ किया। दान, सेवा, करुणा और परोपकार को श्रेष्ठ मानवीय गुण माना जाता था। अनेक धार्मिक संस्थाएँ और दानदाता चिकित्सा सेवाओं तथा औषध वितरण में योगदान देते थे। रोगियों और असहाय व्यक्तियों की सहायता को धार्मिक कर्तव्य और सामाजिक दायित्व के रूप में देखा जाता था। परिणामस्वरूप स्वास्थ्य सेवा केवल राजकीय व्यवस्था का विषय न होकर समाज के विभिन्न वर्गों की सहभागिता से संचालित होने वाली व्यवस्था बन गई।

लोककल्याण के संदर्भ में गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का एक अन्य महत्वपूर्ण पक्ष सामाजिक स्थिरता और आर्थिक विकास से जुड़ा हुआ था। स्वस्थ जनसंख्या उत्पादन, कृषि, व्यापार और अन्य आर्थिक गतिविधियों में अधिक प्रभावी योगदान दे सकती थी। इसलिए स्वास्थ्य सेवाओं का विस्तार अप्रत्यक्ष रूप से राज्य की समृद्धि और स्थिरता में भी सहायक था। इस दृष्टि से स्वास्थ्य व्यवस्था केवल मानवीय सेवा का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक और आर्थिक विकास का भी महत्वपूर्ण आधार थी।

गुप्तकालीन लोककल्याणकारी स्वास्थ्य व्यवस्था में सामाजिक न्याय की भावना भी निहित थी। यद्यपि उस समय समाज में विभिन्न सामाजिक वर्ग विद्यमान थे, फिर भी चिकित्सा सहायता को मानवता और करुणा के आधार पर उपलब्ध कराने का प्रयास किया गया। निर्धनों और असहायों को निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएँ प्रदान करना इस बात का प्रमाण है कि स्वास्थ्य को एक सार्वभौमिक आवश्यकता के रूप में स्वीकार किया गया था। यह व्यवस्था आधुनिक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) की अवधारणा की प्रारंभिक झलक प्रस्तुत करती है।

निष्कर्ष

गुप्तकाल भारतीय इतिहास का एक ऐसा युग था जिसने ज्ञान-विज्ञान, साहित्य, कला, दर्शन तथा चिकित्सा विज्ञान के क्षेत्र में उल्लेखनीय उपलब्धियाँ प्राप्त कीं। इस काल की राजनीतिक स्थिरता, आर्थिक समृद्धि तथा सांस्कृतिक उन्नति ने वैज्ञानिक और बौद्धिक गतिविधियों को प्रोत्साहित किया, जिसके परिणामस्वरूप स्वास्थ्य सेवा और चिकित्सा विज्ञान का भी व्यापक विकास हुआ। गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था भारतीय चिकित्सा परंपरा की परिपक्वता, वैज्ञानिकता और मानवीय दृष्टिकोण का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत करती है। यह केवल रोगों के उपचार तक सीमित व्यवस्था नहीं थी, बल्कि मानव जीवन के समग्र कल्याण, स्वास्थ्य संरक्षण और सामाजिक विकास को केंद्र में रखकर विकसित की गई थी।

प्रस्तुत अध्ययन से स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली का आधार आयुर्वेद था, जिसने स्वास्थ्य को शरीर, मन और आत्मा के संतुलन की अवस्था के रूप में परिभाषित किया। आयुर्वेदिक सिद्धांतों के अनुसार स्वस्थ व्यक्ति के स्वास्थ्य की रक्षा करना तथा रोगी के रोगों का निवारण करना चिकित्सा विज्ञान का प्रमुख उद्देश्य था। इसी कारण गुप्तकालीन चिकित्सक रोगों के उपचार के साथ-साथ स्वास्थ्य संरक्षण, रोग-निवारण, संतुलित आहार, स्वच्छता, योग, व्यायाम तथा नियमित जीवनचर्या पर विशेष बल देते थे। यह दृष्टिकोण आधुनिक निवारक चिकित्सा (Preventive Medicine) और समग्र स्वास्थ्य (Holistic Health) की अवधारणाओं से अत्यंत साम्य रखता है।

गुप्तकाल में चिकित्सा शिक्षा और चिकित्सकीय ज्ञान के विकास को भी नई दिशा प्राप्त हुई। चरक संहिता, सुश्रुत संहिता तथा वाग्भट्ट के ग्रंथों ने चिकित्सा विज्ञान को व्यवस्थित, वैज्ञानिक और व्यावहारिक स्वरूप प्रदान किया। चरक ने आंतरिक चिकित्सा, रोग निदान और औषध विज्ञान को विकसित किया, जबकि सुश्रुत ने शल्य चिकित्सा, अस्थि चिकित्सा तथा नेत्र चिकित्सा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान दिया। वाग्भट्ट ने आयुर्वेद के विभिन्न अंगों को संगठित रूप में प्रस्तुत कर चिकित्सा ज्ञान को सरल और व्यापक बनाया। इन आचार्यों के कार्यों ने न केवल गुप्तकालीन चिकित्सा व्यवस्था को समृद्ध किया, बल्कि आने वाली पीढ़ियों के लिए भी चिकित्सा विज्ञान की मजबूत आधारशिला तैयार की।

प्रस्तुत अध्ययन से यह भी स्पष्ट होता है कि गुप्तकालीन समाज में चिकित्सकों को अत्यंत सम्मानजनक स्थान प्राप्त था। चिकित्सा को केवल एक व्यवसाय नहीं, बल्कि मानव सेवा और लोककल्याण का माध्यम माना जाता था। चिकित्सकों से नैतिकता, करुणा, विद्वता तथा रोगी के प्रति समर्पण की अपेक्षा की जाती थी। चिकित्सा शिक्षा की विकसित व्यवस्था तथा प्रशिक्षित चिकित्सकों की उपलब्धता ने स्वास्थ्य सेवाओं की गुणवत्ता को सुदृढ़ बनाया।

गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था की एक महत्वपूर्ण उपलब्धि चिकित्सालयों और धर्मार्थ चिकित्सा संस्थानों का विकास था। फाह्यान के यात्रा-वृत्तांत से ज्ञात होता है कि उस समय अनेक नगरों में ऐसे चिकित्सालय विद्यमान थे जहाँ निर्धनों, रोगियों, वृद्धों तथा असहाय व्यक्तियों को निःशुल्क चिकित्सा सुविधाएँ उपलब्ध कराई जाती थीं। इन संस्थानों में औषधियों, भोजन तथा रोगियों की देखभाल की व्यवस्था भी की जाती थी। यह तथ्य इस बात का प्रमाण है कि गुप्तकालीन समाज में चिकित्सा को सामाजिक उत्तरदायित्व तथा लोककल्याण के साधन के रूप में देखा जाता था। स्वास्थ्य सेवाओं को समाज के कमजोर वर्गों तक पहुँचाने का प्रयास उस समय की मानवीय और कल्याणकारी सोच को प्रतिबिंबित करता है।

औषध विज्ञान के क्षेत्र में भी गुप्तकाल ने महत्वपूर्ण प्रगति की। विभिन्न औषधीय वनस्पतियों, खनिज पदार्थों तथा पशु-आधारित संसाधनों का उपयोग चिकित्सा में किया जाता था। औषधियों के निर्माण, संरक्षण तथा उपयोग की विधियाँ अधिक व्यवस्थित और वैज्ञानिक बन चुकी थीं। चूर्ण, क्वाथ, अवलेह, घृत, तैल तथा अन्य औषधीय रूपों का प्रयोग चिकित्सा प्रणाली की परिपक्वता को दर्शाता है। प्राकृतिक संसाधनों पर आधारित यह औषधीय ज्ञान भारतीय चिकित्सा परंपरा की विशिष्ट पहचान बन गया।

सार्वजनिक स्वास्थ्य के संदर्भ में भी गुप्तकालीन व्यवस्था अत्यंत विकसित थी। स्वच्छता, शुद्ध पेयजल, पर्यावरणीय संतुलन, व्यक्तिगत स्वच्छता तथा संतुलित जीवनशैली को स्वास्थ्य संरक्षण के आवश्यक अंग माना जाता था। समाज में स्वास्थ्य संबंधी जागरूकता विकसित

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/

करने तथा रोगों की रोकथाम के लिए विभिन्न उपाय अपनाए जाते थे। इस प्रकार गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था केवल व्यक्तिगत उपचार तक सीमित नहीं थी, बल्कि सामुदायिक और सार्वजनिक स्वास्थ्य को भी समान महत्व प्रदान करती थी।

लोककल्याण की भावना गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था का केंद्रीय तत्व थी। स्वास्थ्य सेवाओं का उद्देश्य केवल रोगों का उपचार करना नहीं, बल्कि समाज के प्रत्येक वर्ग के जीवन स्तर को बेहतर बनाना था। निर्धनों, असहायों तथा रोगियों के लिए चिकित्सा सुविधाओं की उपलब्धता सामाजिक न्याय और मानवीय संवेदनशीलता का परिचायक थी। इस दृष्टि से गुप्तकालीन स्वास्थ्य व्यवस्था आधुनिक कल्याणकारी राज्य (Welfare State) की अवधारणा की प्रारंभिक अभिव्यक्ति के रूप में भी देखी जा सकती है।

अंततः यह कहा जा सकता है कि गुप्तकालीन स्वास्थ्य सेवा प्रणाली भारतीय चिकित्सा इतिहास का एक गौरवपूर्ण अध्याय है। आयुर्वेदिक सिद्धांतों, चिकित्सा शिक्षा, औषध विज्ञान, चिकित्सालयों की व्यवस्था, सार्वजनिक स्वास्थ्य तथा लोककल्याण की अवधारणाओं ने मिलकर एक ऐसी स्वास्थ्य व्यवस्था का निर्माण किया जो अपने समय की आवश्यकताओं के अनुरूप अत्यंत उन्नत, वैज्ञानिक और मानवीय थी। गुप्तकाल में विकसित चिकित्सा परंपरा ने न केवल भारतीय समाज को स्वास्थ्य संबंधी सुदृढ़ आधार प्रदान किया, बल्कि एशिया के अनेक क्षेत्रों में चिकित्सा ज्ञान के प्रसार को भी प्रभावित किया। इसलिए गुप्तकाल को भारतीय स्वास्थ्य सेवा और चिकित्सा विज्ञान के इतिहास में एक स्वर्णिम युग के रूप में स्मरण किया जाता है, जिसकी उपलब्धियाँ आज भी भारतीय चिकित्सा परंपरा की अमूल्य धरोहर के रूप में विद्यमान हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल, वासुदेव शरण. गुप्तकालीन भारत. नई दिल्ली: राजकमल प्रकाशन; 2018.
2. अल्तेकर, अनंत सदाशिव. गुप्तकालीन भारत का इतिहास और संस्कृति. वाराणसी: मोतीलाल बनारसीदास; 2016.
3. उपाध्याय, वासुदेव. प्राचीन भारतीय संस्कृति. प्रयागराज: लोकभारती प्रकाशन; 2017.
4. काणे, पांडुरंग वामन. धर्मशास्त्र का इतिहास (भाग–2). वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान; 2015.
5. चरक. चरक संहिता. संपादक: ब्रह्मानंद त्रिपाठी. वाराणसी: चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन; 2019.
6. द्विवेदी, गिरिन्द्रनाथ. आयुर्वेद का इतिहास. वाराणसी: चौखम्बा कृष्णदास अकादमी; 2014.
7. पाण्डेय, राजबली. प्राचीन भारत. वाराणसी: चौखम्बा विद्याभवन; 2018.
8. शर्मा, प्रियव्रत. आयुर्वेद का इतिहास. नई दिल्ली: भारतीय ज्ञानपीठ; 2013.
9. सुश्रुत. सुश्रुत संहिता. संपादक: अम्बिकादत्त शास्त्री. वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत संस्थान; 2018.
10. वाग्भट्ट. अष्टांग हृदयम्. संपादक: ब्रह्मानंद त्रिपाठी. वाराणसी: चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान; 2017.

Creative Commons (CC) License

This article is an open-access article distributed under the terms and conditions of the Creative Commons Attribution–Non-Commercial–No Derivatives 4.0 International (CC BY-NC-ND 4.0) license. This license permits sharing and redistribution of the article in any medium or format for non-commercial purposes only, provided that appropriate credit is given to the original author(s) and source. No modifications, adaptations, or derivative works are permitted under this license.

© 2026 जितेन्द्र कुमार मीना, प्रो. (डॉ.) संजीव कुमार This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution 4.0 International License (CC BY NC ND).https://creativecommons.org/licenses/by/4.0/